Government of Karnataka

साहित्य वैभव

प्रथम पी.यू.सी. हिन्दी पाठ्यपुस्तक

SAHITYA VAIBHAV

(I PUC Hindi: Detailed and Non-detailed Text)

Department of Pre University Education
Malleshwaram, Bengaluru - 12
www.pue.kar.nic.in

SAHITYA VAIBHAV

An anthology of Hindi Prose, Poetry and Stories compiled by the Text Book Committee constituted by the Directorate of PUE, Bangalore and prescribed as Detailed and Non-detailed text for the First Year Pre-University Course.

Revised Edition
May - 2014

© *Directorate of Pre-University Education 2013.*

All Rights Are Reserved

No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted, in any form or by any means, electronic, mechanical, photo copying, recording or otherwise without the prior permission of the publisher.

This book is sold subject to the condition that it shall not, by way of trade, be lent, resold, hired out or otherwise disposed of without the publisher's consent, in any form of binding or cover other than that in which it is published.

The correct price of this publication is the price printed on this page/cover page. Any revised price indicated by a rubber stamp or by a sticker or by any other means is incorrect and should be unacceptable.

Printed on 80 GSM Maplitho paper

The Karnataka Text Book Society ®
100 feet Ring Road, Banashankari
III Stage, BANGALORE - 560 085.

Publisher :
SRI VENKATESHWARA ENTERPRISES
#56/A, 9th Main, 1st Cross, Kaverinagar,
BSK II Stage, Banashanakari Industrial Area
Bangalore - 560 070.
Mobile : 98455 82152 / 94480 58802
Email : vinayaka1000@yahoo.com

EDITORIAL BOARD

CHAIRMAN

Dr. SANGAPPA N. SHIVAREDDI
Lecturer in Hindi,
S.M. Bhoomaraddi P.U. College,
Gajendragad - 582 114
Dist. : GADAG

CO-ORDINATOR

Dr. SANTOSH KUMAR MISRA
Lecturer in Hindi,
Govt. Pre-University College for Boys',
18th Cross, Malleshwaram, Bangalore - 560 012

MEMBERS

1. **MAHER AFZAL M. JAHAGIRDAR**
Lecturer in Hindi,
SECAB P.U. College for Boys',
Behind Taj Bowdi,
Bijapur - 586 101

2. **Dr. SURESH MARUTIRAO MULEY**
Lecturer in Hindi,
Vidyaranya P.U. College,
Dharwad - 580 001

3. **SATYANARAYANA N.**
Lecturer in Hindi,
Sri. Kongadiyappa P.U. College,
Doddaballapur - 561 203
Bangalore Rural District

MEMBERS

4. **Dr. NAYAK RUPASINGH G.**
Lecturer in Hindi,
Besant P.U. College,
Kodial Bail, Mangalore - 3

5. **G.M. GONDA**
Lecturer in Hindi,
Bhandarkar's P.U. College,
Kundapur,
Udupi District

6. **EKANATH N. MORE**
Lecturer in Hindi,
J.A. Composite P.U. College,
Athani - 591 304,
Dist. Belgaum

7. **PRAKASH GAIDHANKAR**
Lecturer in Hindi,
Hamdard P.U. College,
Raichur

8. **M.R. RATHOD**
Lecturer in Hindi,
Govt. P.U. College,
Basavakalyan,
Dist. Bidar

9. **R.B. JAGADALE**
Lecturer in Hindi,
Govt. P.U. College,
Kamalapur,
Tq. & Dist. Gulbarga

REVIEW COMMITTEE

1. **Dr. MITHALI BHATTACHARJEE**
   Professor, Department of Hindi,
   Bangalore University,
   Bangalore - 560 056

2. **Dr. MYTHILI P. RAO**
   Dean - Languages,
   Jain University,
   No. 34, 1st Cross, J.C. Road,
   Bangalore - 560 027

प्राक्कथन

परिवर्तन ही जीवन का नियम है। शिक्षा के स्तर पर भी उत्तरोत्तर नए-नए बदलाव देखने को मिल रहे हैं। आज पठन-पाठन कक्षा की चारदीवारी तक ही सीमित नहीं है। ज्ञान प्राप्त करने के अनेक साधन उपलब्ध हैं। हाईस्कूल की शिक्षा पूरी करके विद्यार्थी पी.यू.सी. में कदम रखते हैं। स्कूल में वे प्रथम, द्वितीय अथवा तृतीय भाषा के रूप में हिन्दी का अध्ययन करते हैं। वहीं दूसरी ओर कुछ विद्यार्थी सी.बी.एस.ई. अथवा आई.सी.एस.ई. बोर्ड से हिन्दी का अध्ययन करके पी.यू.सी. में आते हैं। इन सबको ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत पाठ्यक्रम और उस पर आधारित पाठ्यपुस्तक की रचना का दायित्व समिति को सौंपा गया है।

भाषा और साहित्य का अन्योन्याश्रित संबंध है। समिति ने भाषा और साहित्य को समान रूप से महत्व दिया है ताकि विद्यार्थी दोनों पर समान रूप से अधिकार प्राप्त करते हुए साहित्य का रसास्वादन कर सकें।

प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक के तीन भाग हैं – **गद्य भाग, पद्य भाग** (मध्ययुगीन काव्य तथा आधुनिक कविता) एवं **अपठित भाग** के अंतर्गत कहानियाँ।

इस पाठ्यपुस्तक की विशेषताएँ निम्नांकित हैं :

१) गद्य भाग के अंतर्गत सभी विधाओं – कहानी, जीवनी, निबंध, रेखाचित्र, एकांकी आदि की जानकारी विद्यार्थियों को देने हेतु सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक एवं बौद्धिक स्तर को बढ़ाने वाले पाठों को संग्रहीत किया गया है। पद्य भाग में मध्ययुगीन काव्य – कबीरदास, तुलसीदास, मीराबाई, रसखान की रचनाओं के साथ पहली बार बारहवीं शताब्दी के अल्लमप्रभु, बसवेश्वर तथा अक्कमहादेवी के वचनों को प्रथम वर्ष पी.यू.सी. (हिन्दी) पाठ्यपुस्तक में सम्मिलित किया गया है। आधुनिक कविता वैविध्यपूर्ण है। इसमें अहिन्दी भाषी रचनाकारों की रचनाओं को भी संग्रहीत किया गया है।

२) कहानी, लेख, निबंध, यात्रा-वृत्तांत, एकांकी आदि तथा कविताओं के चयन में विशेष रूप से ध्यान रखा गया है कि पाठ और कविताएँ सरल, सरस और ज्ञानवर्धक हों तथा विद्यार्थियों को समग्र जानकारी मिल सके। विषय की विविधता के साथ ही छात्र-छात्राओं के व्यक्तित्व विकास पर भी बल दिया गया है।

३) वर्तमान साहित्यिक परिदृश्य में कहानियों के अंतर्गत नई विधा और नए कहानीकारों की कथाओं को भी यथोचित स्थान दिया गया है।

४) हिन्दी पाठ्यपुस्तक के साथ ही 'अभ्यास पुस्तिका' की भी अलग से रचना की गई है जिसमें गद्य, पद्य एवं अपठित भाग से चुनिंदा अभ्यास प्रश्नों को शामिल किया गया है। चतुर्थ सोपान में **व्याकरण तथा रचना भाग** के अंतर्गत पाठ्यक्रम में सम्मिलित विषयों पर अभ्यास कार्य दिया गया है। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों की लेखन प्रवृत्ति को विकसित करना है।

प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक में संकलित पाठों के चयन में अनेक शिक्षाविदों, अनुभवी प्राध्यापकों तथा भाषाविदों का सहयोग मिला है तदर्थ हम उनके प्रति आभार प्रकट करते हैं। उपाधि-पूर्व शिक्षा विभाग के निदेशक, संयुक्त निदेशक तथा अन्य पदाधिकारियों के प्रति हम आभारी हैं जिन्होंने समय-समय पर न सिर्फ हमारा मार्गदर्शन किया बल्कि निश्चित समयावधि में पाठ्यपुस्तक की रचना हेतु भरपूर सहयोग दिया।

संपादक मंडल

अनुक्रमणिका

प्रथम सोपान – गद्य भाग

	पाठ	लेखक / कवि	पृष्ठ संख्या
१.	बड़े घर की बेटी	प्रेमचंद	१
२.	युवाओं से	स्वामी विवेकानंद	१४
३.	निन्दा रस	हरिशंकर परसाई	२४
४.	बिन्दा	महादेवी वर्मा	३१
५.	बाबासाहेब डॉ. अंबेडकर	शान्ति स्वरूप बौद्ध	४१
६.	दिल का दौरा और एनजाइना	डॉ. यतीश अग्रवाल	५१
७.	मेरी बद्रीनाथ यात्रा	विष्णु प्रभाकर	६०
८.	नालायक	विवेकी राय	७०
९.	राष्ट्र का स्वरूप	वासुदेवशरण अग्रवाल	७८
१०.	रिहर्सल	ओमप्रकाश 'आदित्य'	८६

द्वितीय सोपान – पद्य भाग

(अ) मध्ययुगीन काव्य

१.	कबीरदास के दोहे	९९
२.	तुलसीदास के दोहे	१०२
३.	मीराबाई के पद	१०५
४.	शरण वचनामृत – अल्लमप्रभु, बसवेश्वर, अक्कमहादेवी	१०८
५.	रीतिकालीन काव्य – रसखान के सवैये	११२

पाठ		लेखक / कवि	पृष्ठ संख्या
(आ)	**आधुनिक कविता**		
१.	कुटिया में राजभवन	मैथिलीशरण गुप्त	११५
२.	तोड़ती पत्थर	सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'	११८
३.	उल्लास	सुभद्राकुमारी चौहान	१२१
४.	तुम गा दो, मेरा गान अमर हो जाए	हरिवंशराय 'बच्चन'	१२४
५.	प्रतिभा का मूल बिन्दु	प्रभाकर माचवे	१२७
६.	तुम आओ मन के मुग्ध मीत	सरगु कृष्णमूर्ति	१२९
७.	मत घबराना	रामनिवास 'मानव'	१३२
८.	अभिनंदनीय नारी	जयन्ती प्रसाद नौटियाल	१३५

तृतीय सोपान – अपठित भाग (कहानियाँ)

१.	मधुआ	जयशंकर प्रसाद	१३९
२.	श्मशान	मन्नू भंडारी	१४७
३.	खून का रिश्ता	भीष्म साहनी	१५५
४.	शीत लहर	जयप्रकाश कर्दम	१७२
५.	सिलिया	सुशीला टाकभौरे	१८२
६.	दोपहर का भोजन	अमरकांत	१९२

प्रथम सोपान

गद्य भाग

१. बड़े घर की बेटी

— प्रेमचन्द

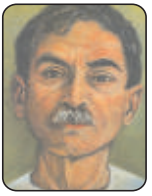

लेखक परिचय :

उपन्यास सम्राट और कहानीकार मुंशी प्रेमचंद का जन्म काशी के निकट लमही नामक गाँव में सन् १८८० में हुआ था। आपके पिता का नाम अजायबराय तथा माता का नाम आनंदीदेवी था। आपका जीवन बहुत संघर्षपूर्ण रहा। आपने अनेक उपन्यास लिखे जिनमें 'गोदान', 'गबन', 'कर्म भूमि', 'सेवासदन', 'रंगभूमि' तथा 'निर्मला' आदि बहुत ही प्रसिद्ध हैं। आपने तीन सौ से अधिक कहानियाँ भी लिखीं, जो मानसरोवर के आठ भागों में संकलित हैं। आपकी रचनाओं में मानव जीवन एवं भारत के गाँवों की दशा का मार्मिक चित्रण हुआ है। ८ अक्टूबर सन् १९३६ को आपका स्वर्गवास हुआ।

प्रस्तुत कहानी 'बड़े घर की बेटी' प्रेमचन्द की श्रेष्ठ कहानियों में से एक है। सामाजिक जीवन के सूक्ष्म चित्रकार मुंशी प्रेमचन्द ने इस कहानी में मध्यम वर्ग के गृहस्थ जीवन की एक ऐसी घटना को चित्रित किया है, जो हमारे घरों में आये दिन घटती रहती है। आनंदी बड़े घर की बेटी है। सम्पन्न घर की सुविधाओं का अभ्यस्थ होने पर भी उसने अपने आपको श्रीकंठ के रुढ़िग्रस्त तथा अभावों से पूर्ण घर के अनुकूल बना लिया।

एक दिन श्रीकंठ के छोटे भाई लालबिहारी सिंह के अभद्र व्यवहार के कारण आनंदी को क्रोध आ गया। झगड़ा यहाँ तक बढ़ गया कि दोनों भाइयों के अटूट-प्रेम की कड़ियाँ शिथिल हो गईं और लालबिहारी घर छोड़कर जाने लगा। घर को बिखरता देख आनन्दी की सात्विक वृत्तियाँ जाग उठीं। उसने लालबिहारी को रोक लिया और बिगड़ता हुआ काम बना लिया। उच्च कुल की आदर्श महिलाएँ कष्ट सहकर अपमानित होकर भी मर्यादा नष्ट नहीं होने देतीं। यही इस कहानी का सन्देश है। पारिवारिक सदस्यों के आपसी संबंधों के महत्व को उजागर करने के उद्देश्य से प्रस्तुत पाठ का चयन किया गया है।

बेनीमाधव सिंह गौरीपुर गाँव के जमींदार और नम्बरदार थे। उनके पितामह किसी समय बड़े धन-धान्य संपन्न थे। गाँव का पक्का तालाब और मंदिर जिनकी अब मरम्मत भी मुश्किल थी, उन्हीं के कीर्ति-स्तंभ थे। कहते हैं, इस दरवाजे पर हाथी झूमता था, अब उसकी जगह एक बूढ़ी भैंस थी, जिसके शरीर में अस्थि-पंजर के सिवा और कुछ शेष न रहा था, पर दूध शायद बहुत देती थी; क्योंकि एक न एक आदमी हाँड़ी लिए उसके सिर पर सवार ही रहता था। बेनीमाधव सिंह अपनी आधी से अधिक संपत्ति वकीलों को भेंट कर चुके थे। उनकी वर्तमान आय एक हजार रुपये वार्षिक से अधिक न थी। ठाकुर साहब के दो बेटे थे। बड़े का नाम श्रीकंठ सिंह था। उसने बहुत दिनों के परिश्रम और उद्योग के बाद बी.ए. की डिग्री प्राप्त की थी। अब एक दफ्तर में नौकर था। छोटा लड़का लालबिहारी सिंह दोहरे बदन का, सजीला जवान था। भरा हुआ मुखड़ा, चौड़ी छाती। भैंस का दो सेर ताजा दूध वह उठ कर सबेरे पीता था। श्रीकंठ सिंह की दशा बिलकुल विपरीत थी। इन नेत्रप्रिय गुणों को उन्होंने बी.ए. – इन्हीं दो अक्षरों पर न्योछावर कर दिया था। इन दो अक्षरों ने उनके शरीर को निर्बल और चेहरे को कांतिहीन बना दिया था। इसी से वैद्यक ग्रंथों पर उनका विशेष प्रेम था। आयुर्वेदिक औषधियों पर उनका अधिक विश्वास था। शाम-सबेरे से उनके कमरे से प्राय: खरल की सुरीली कर्णमधुर ध्वनि सुनायी दिया करती थी। लाहौर और कलकत्ते के वैद्यों से बड़ी लिखा-पढ़ी रहती थी।

श्रीकंठ इस अँगरेजी डिग्री के अधिपति होने पर भी अँगरेजी सामाजिक प्रथाओं के विशेष प्रेमी न थे; बल्कि वह बहुधा बड़े जोर से उसकी निंदा और तिरस्कार किया करते थे। इससे गाँव में उनका बड़ा सम्मान था। दशहरे के दिनों में वह बड़े उत्साह से रामलीला में सम्मिलित होते और स्वयं किसी न किसी पात्र का पार्ट लेते थे। गौरीपुर में रामलीला के वही जन्मदाता थे। प्राचीन हिंदू सभ्यता का गुणगान उनकी धार्मिकता का प्रधान अंग था। सम्मिलित कुटुम्ब के तो वह एकमात्र उपासक थे। आजकल स्त्रियों को कुटुम्ब में मिल-जुल कर रहने की जो अरुचि होती है, उसे वह जाति और देश दोनों के लिए हानिकारक समझते थे। यही कारण था कि गाँव की ललनाएँ उनकी निंदक थीं। कोई-कोई तो उन्हें अपना शत्रु समझने में भी संकोच न करती थीं। स्वयं उनकी पत्नी को ही इस विषय में

उनसे विरोध था। यह इसलिए नहीं कि उसे अपने सास-ससुर, देवर या जेठ आदि से घृणा थी, बल्कि उसका विचार था कि यदि बहुत कुछ सहने और तरह देने पर भी परिवार के साथ निर्वाह न हो सके, तो आये-दिन की कलह से जीवन को नष्ट करने की अपेक्षा यही उत्तम है कि अपनी खिचड़ी अलग पकायी जाय।

आनंदी एक बड़े उच्च कुल की लड़की थी। उसके बाप एक छोटी-सी रियासत के ताल्लुकेदार थे। विशाल भवन, एक हाथी, तीन कुत्ते, बाज, बहरी-शिकरे, झाड़-फानूस, आनरेरी मजिस्ट्रेटी और ऋण, जो एक प्रतिष्ठित ताल्लुकेदार के भोग्य पदार्थ हैं, यहाँ सभी विद्यमान थे। नाम था भूपसिंह। बड़े उदार-चित्त और प्रतिभाशाली पुरुष थे; पर दुर्भाग्य से लड़का एक भी न था। सात लड़कियाँ हुईं और दैवयोग से सब की सब जीवित रहीं। पहली उमंग में तो उन्होंने तीन ब्याह दिल खोल कर किये; पर पंद्रह-बीस हजार रुपयों का कर्ज सिर पर हो गया, तो आँखें खुलीं, हाथ समेट लिया; आनंदी चौथी लड़की थी। वह अपनी सब बहनों से अधिक रूपवती और गुणवती थी। इससे ठाकुर भूपसिंह उसे बहुत प्यार करते थे। सुन्दर संतान को कदाचित् उसके माता-पिता भी अधिक चाहते हैं। ठाकुर साहब बड़े धर्म-संकट में थे कि इसका विवाह कहाँ करें? न तो यही चाहते थे कि ऋण का बोझ बढ़े और न यही स्वीकार था कि उसे अपने को भाग्यहीन समझना पड़े। एक दिन श्रीकंठ उनके पास किसी चंदे का रुपया माँगने आये। शायद नागरी-प्रचार का चंदा था। भूपसिंह उनके स्वभाव पर रीझ गये और धूमधाम से श्रीकंठ सिंह का आनंदी के साथ ब्याह हो गया।

आनंदी अपने नये घर में आयी, तो यहाँ का रंग-ढंग कुछ और ही देखा। जिस टीम-टाम की उसे बचपन से ही आदत पड़ी हुई थी, वह यहाँ नाम-मात्र को भी न थी। हाथी-घोड़ों का तो कहना ही क्या, कोई सजी हुई सुंदर बहली तक न थी। रेशमी स्लीपर साथ लायी थी; पर यहाँ बाग कहाँ। मकान में खिड़कियाँ तक न थीं, न जमीन पर फर्श, न दीवार पर तस्वीरें। यह सीधा-सादा देहाती गृहस्थ का मकान था; किन्तु आनंदी ने थोड़े ही दिनों में अपने को इस नयी अवस्था के ऐसा अनुकूल बना लिया, मानो उसने विलास के सामान कभी देखे ही न थे।

२

एक दिन दोपहर के समय लालबिहारी सिंह दो चिड़िया लिये हुए आया और भावज से बोला – जल्दी से पका दो, मुझे भूख लगी है। आनंदी भोजन बना कर उसकी राह देख रही थी। अब वह नया व्यंजन बनाने बैठी। हाँडी में देखा, तो घी पाव-भर से अधिक न था। बड़े घर की बेटी, किफायत क्या जाने। उसने सब घी माँस में डाल दिया। लालबिहारी खाने बैठा, तो दाल में घी न था, बोला – दाल में घी क्यों नहीं छोड़ा?

आनंदी ने कहा – घी सब माँस में पड़ गया। लालबिहारी जोर से बोला – अभी परसों घी आया है। इतना जल्दी उठ गया?

आनंदी ने उत्तर दिया – आज तो कुल पाव भर रहा होगा। वह सब मैंने माँस में डाल दिया।

जिस तरह सूखी लकड़ी जल्दी से जल उठती है उसी तरह क्षुधा से बावला मनुष्य जरा-जरा सी बात पर तिनक जाता है। लालबिहारी को भावज की यह ढिठाई बहुत बुरी मालुम हुई, तिनक कर बोला – मैके में तो चाहे घी की नदी बहती हो !

स्त्री गालियाँ सह लेती हैं, मार भी सह लेती हैं, पर मैके की निंदा उनसे नहीं सही जाती। आनंदी मुँह फेर कर बोली – हाथी मरा भी, तो नौ लाख का। वहाँ इतना घी नित्य नाई-कहार खा जाते हैं।

लालबिहारी जल गया, थाली उठाकर पलट दी और बोला – जी चाहता है, जीभ पकड़ कर खींच लूँ।

आनंदी को भी क्रोध आ गया। मुँह लाल हो गया, बोली – वह होते तो आज इसका मजा चखाते।

अब अपढ़, उजड्ड ठाकुर से न रहा गया। उसकी स्त्री एक साधारण जमींदार की बेटी थी। जब जी चाहता, उस पर हाथ साफ कर लिया करता था। खड़ाऊँ उठाकर आनंदी की ओर जोर से फेंकी और बोला – जिसके गुमान पर भूली हुई हो, उसे भी देखूँगा और तुम्हें भी।

आनंदी ने हाथ से खड़ाऊँ रोकी, सिर बच गया; पर उँगली में बड़ी चोट आयी। क्रोध के मारे हवा से हिलते पत्ते की भाँति काँपती हुई अपने कमरे में आकर खड़ी हो गयी। स्त्री का बल और साहस, मान और

मर्यादा पति तक है। उसे अपने पति के ही बल और पुरुषत्व का घमंड होता है। आनंदी खून का घूँट पीकर रह गयी।

३

श्रीकंठ सिंह शनिवार को घर आया करते थे। बृहस्पति को यह घटना हुई थी। दो दिन तक आनंदी कोप-भवन में रही। न कुछ खाया न पिया, उनकी बाट देखती रही। अंत में शनिवार को वह नियमानुकूल संध्या समय घर आये और बाहर बैठ कर कुछ इधर-उधर की बातें, कुछ देश-काल संबंधी समाचार तथा कुछ नये मुकदमों आदि की चर्चा करने लगे। यह वार्तालाप दस बजे रात तक होता रहा। गाँव के भद्र पुरुषों को इन बातों में ऐसा आनंद मिलता था कि खाने-पीने की भी सुधि न रहती थी। श्रीकंठ को पिंड छुड़ाना मुश्किल हो जाता था। ये दो-तीन घंटे आनंदी ने बड़े कष्ट से काटे! किसी तरह भोजन का समय आया। पंचायत उठी। एकांत हुआ, तो लालबिहारी ने कहा – भैया, आप जरा भाभी को समझा दीजिएगा कि मुँह सँभाल कर बातचीत किया करें, नहीं तो एक दिन अनर्थ हो जायेगा।

बेनीमाधव सिंह ने बेटे की ओर साक्षी दी – हाँ, बहू-बेटियों का यह स्वभाव अच्छा नहीं कि मर्दों के मुँह लगें।

लालबिहारी – वह बड़े घर की बेटी है, तो हम भी कोई कुर्मी-कहार नहीं हैं। श्रीकंठ ने चिंतित स्वर में पूछा – आखिर बात क्या हुई?

लालबिहारी ने कहा – कुछ भी नहीं, यों ही आप ही आप उलझ पड़ीं। मैके के सामने हम लोगों को कुछ समझती ही नहीं।

श्रीकंठ खा-पीकर आनंदी के पास गये। वह भरी बैठी थी। यह हजरत भी कुछ तीखे थे। आनंदी ने पूछा – चित्त तो प्रसन्न है।

श्रीकंठ बोले – बहुत प्रसन्न है; पर तुमने आजकल घर में यह क्या उपद्रव मचा रखा है?

आनंदी की त्योरियों पर बल पड़ गये, झुँझलाहट के मारे बदन में ज्वाला-सी दहक उठी। बोली – जिसने तुमसे यह आग लगायी है, उसे पाऊँ, मुँह झुलस दूँ।

श्रीकंठ – इतनी गरम क्यों होती हो, बात तो कहो।

आनंदी – क्या कहूँ, यह मेरे भाग्य का फेर है! नहीं तो गँवार छोकरा, जिसको चपरासगिरी करने का भी शऊर नहीं, मुझे खड़ाऊँ से मार कर यों न अकड़ता।

श्रीकंठ – सब हाल साफ-साफ कहो, तो मालूम हो। मुझे तो कुछ पता नहीं।

आनंदी – परसों तुम्हारे लाड़ले भाई ने मुझसे माँस पकाने को कहा। घी हाँडी में पाव-भर से अधिक न था। वह सब मैंने माँस में डाल दिया। जब खाने बैठा तो कहने लगा – दाल में घी क्यों नहीं है। बस, इसी पर मेरे मैके को बुरा-भला कहने लगा – मुझसे न रहा गया। मैंने कहा कि वहाँ इतना घी तो नाई-कहार खा जाते हैं और किसी को जान भी नहीं पड़ता। बस इतनी सी बात पर इस अन्यायी ने मुझ पर खड़ाऊँ फेंक मारी। यदि हाथ से न रोक लूँ, तो सिर फट जाय। उसी से पूछो, मैंने जो कुछ कहा है, वह सच है या झूठ।

श्रीकंठ की आँखें लाल हो गयीं। बोले – यहाँ तक हो गया, इस छोकरे का यह साहस !

आनंदी स्त्रियों के स्वभावानुसार रोने लगी; क्योंकि आँसू उनकी पलकों पर रहते हैं। श्रीकंठ बड़े धैर्यवान और शांत पुरुष थे। उन्हें कदाचित् ही कभी क्रोध आता था; स्त्रियों के आँसू पुरुष की क्रोधाग्नि भड़काने में तेल का काम देते हैं। रात भर करवटें बदलते रहे। उद्विग्नता के कारण पलक तक नहीं झपकी। प्रात:काल अपने बाप के पास जाकर बोले – दादा, अब इस घर में मेरा निबाह न होगा।

इस तरह की विद्रोह-पूर्ण बातें कहने पर श्रीकंठ ने कितनी ही बार अपने कई मित्रों को आड़े हाथों लिया था, परन्तु दुर्भाग्य, आज उन्हें स्वयं वे ही बातें अपने मुँह से कहनी पड़ी ! दूसरों को उपदेश देना भी कितना सहज है!

बेनीमाधव सिंह घबरा उठे और बोले – क्यों?

श्रीकंठ – इसलिए कि मुझे भी अपनी मान-प्रतिष्ठा का कुछ विचार है। आपके घर में अब अन्याय और हठ का प्रकोप हो रहा है। जिनको बड़ों का आदर-सम्मान करना चाहिए, वे उनके सिर चढ़ते हैं। मैं दूसरे का नौकर ठहरा घर पर रहता नहीं। यहाँ मेरे पीछे स्त्रियों पर खड़ाऊँ और जूतों की बौछारें होती हैं। कड़ी बात तक चिन्ता नहीं। कोई एक की

दो कह ले, वहाँ तक मैं सह सकता हूँ किन्तु यह कदापि नहीं हो सकता कि मेरे ऊपर लात-घूँसे पड़ें और मैं दम न मारूँ।

बेनीमाधव सिंह कुछ जवाब न दे सके। श्रीकंठ सदैव उनका आदर करते थे। उनके ऐसे तेवर देख कर बूढ़ा ठाकुर अवाक् रह गया। केवल इतना ही बोला – बेटा, तुम बुद्धिमान होकर ऐसी बातें करते हो? स्त्रियाँ इस तरह घर का नाश कर देती हैं। उनको बहुत सिर चढ़ाना अच्छा नहीं।

श्रीकंठ – इतना मैं जानता हूँ, आपके आशीर्वाद से ऐसा मूर्ख नहीं हूँ। आप स्वयं जानते हैं कि मेरे ही समझाने-बुझाने से इस गाँव में कई घर सँभल गये, पर जिस स्त्री की मान-प्रतिष्ठा का ईश्वर के दरबार में उत्तरदाता हूँ, उसके प्रति ऐसा घोर अन्याय और पशुवत् व्यवहार मुझे असह्य है। आप सच मानिए, मेरे लिए यही कुछ कम नहीं है कि लालबिहारी को कुछ दंड नहीं देता।

अब बेनीमाधव सिंह भी गरमाये। ऐसी बातें और न सुन सके। बोले – लालबिहारी तुम्हारा भाई है। उससे जब कभी भूल-चूक हो, उसके कान पकड़ो लेकिन .....

श्रीकंठ – लालबिहारी को मैं अब अपना भाई नहीं समझता।

बेनीमाधव सिंह – स्त्री के पीछे?

श्रीकंठ – जी नहीं, उनकी क्रूरता और अविवेक के कारण।

दोनों कुछ देर चुप रहे। ठाकुर साहब लड़के का क्रोध शांत करना चाहते थे, लेकिन यह नहीं स्वीकार करना चाहते थे कि लालबिहारी ने कोई अनुचित काम किया है। इसी बीच में गाँव के और कई सज्जन हुक्के-चिलम के बहाने वहाँ आ बैठे। कई स्त्रियों ने जब यह सुना कि श्रीकंठ पत्नी के पीछे पिता से लड़ने को तैयार है, तो उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। दोनों पक्षों की मधुर वाणियाँ सुनने के लिए उनकी आत्माएँ तिलमिलाने लगीं। गाँव में कुछ ऐसे कुटिल मनुष्य भी थे, जो इस कुल की नीतिपूर्ण गति पर मन ही मन जलते थे। वे कहा करते थे – श्रीकंठ अपने बाप से दबता है, इसीलिए वह दब्बू है। उसने विद्या पढ़ी, इसलिए वह किताबों का कीड़ा है। बेनीमाधव सिंह उनकी सलाह के बिना कोई काम नहीं करते, यह उनकी मूर्खता है। इन महानुभावों की शुभकामनाएँ आज पूरी होती दिखायी दीं। कोई हुक्का पीने के बहाने और कोई लगान की रसीद दिखाने आकर बैठ गया।

बेनीमाधव सिंह पुराने आदमी थे। इन भावों को ताड़ गये। उन्होंने निश्चय किया चाहे कुछ ही क्यों न हो, इन द्रोहियों को ताली बजाने का अवसर न दूँगा। तुरंत कोमल शब्दों में बोले – बेटा, मैं तुमसे बाहर नहीं हूँ। तुम्हारा जो जी चाहे करो, अब तो लड़के से अपराध हो गया।

इलाहाबाद का अनुभव-रहित झल्लाया हुआ ग्रेजुएट इस बात को न समझ सका। उसे डिबेटिंग-क्लब में अपनी बात पर अड़ने की आदत थी, इन हथकंडों की उसे क्या खबर? बाप ने जिस मतलब से बात पलटी थी, वह उसकी समझ में न आया। बोला – लालबिहारी के साथ अब इस घर में नहीं रह सकता।

बेनीमाधव – बेटा, बुद्धिमान लोग मूर्खों की बात पर ध्यान नहीं देते। वह बेसमझ लड़का है। उससे जो कुछ भूल हुई, उसे तुम बड़े होकर क्षमा करो।

श्रीकंठ – उसकी इस दुष्टता को मैं कदापि नहीं सह सकता। या तो वही घर में रहेगा या मैं ही। आपको यदि वह अधिक प्यारा है, तो मुझे विदा कीजिए, मैं अपना भार आप सँभाल लूँगा। यदि मुझे रखना चाहते हैं तो उससे कहिए, जहाँ चाहे चला जाय। बस यह मेरा अंतिम निश्चय है।

लालबिहारी सिंह दरवाजे की चौखट पर चुपचाप खड़ा बड़े भाई की बातें सुन रहा था। वह उनका बहुत आदर करता था। उसे कभी इतना साहस न हुआ था कि श्रीकंठ के सामने चारपाई पर बैठ जाय, हुक्का पी ले या पान खा ले। बाप का भी वह इतना मान न करता था। श्रीकंठ का भी उस पर हार्दिक स्नेह था। अपने होश में उन्होंने कभी उसे घुड़का तक न था। जब वह इलाहाबाद से आते, तो उसके लिए कोई न कोई वस्तु अवश्य लाते। मुगदर की जोड़ी उन्होंने ही बनवा दी थी। पिछले साल जब उसने अपने से डयौंढ़े जवान को नागपंचमी के दिन दंगल में पछाड़ दिया, तो उन्होंने पुलकित होकर अखाड़े में ही जाकर उसे गले से लगा लिया था, पाँच रुपये के पैसे लुटाये थे। ऐसे भाई के मुँह से आज ऐसी हृदय-विदारक बात सुन कर लालबिहारी को बड़ी ग्लानि हुई। वह फूट-फूट कर रोने लगा। इसमें संदेह नहीं कि अपने किये पर पछता रहा था। भाई के आने से एक दिन पहले से उसकी छाती धड़कती थी कि देखूँ भैया क्या कहते हैं। मैं उनके सम्मुख कैसे जाऊँगा, उनसे कैसे बोलूँगा, मेरी आँखें उनके सामने कैसे उठेंगी। उसने समझा था कि भैया मुझे बुला कर

समझा देंगे। इस आशा के विपरीत आज उसने उन्हें निर्दयता की मूर्ति बने हुए पाया। वह मूर्ख था। परन्तु उसका मन कहता था कि भैया मेरे साथ अन्याय कर रहे हैं। यदि श्रीकंठ उसे अकेले में बुला कर दो-चार बातें कह देते; इतना ही नहीं दो-चार तमाचे भी लगा देते तो कदाचित् उसे इतना दुःख न होता; पर भाई का यह कहना कि अब मैं इसकी सूरत नहीं देखना चाहता, लालबिहारी से सहा न गया। वह रोता हुआ घर आया। कोठरी में जाकर कपड़े पहने, आँखें पोंछी, जिसमें कोई यह न समझे कि रोता था। तब आनंदी के द्वार पर आकर बोला – भाभी, भैया ने निश्चय किया है कि वह मेरे साथ घर में न रहेंगे। अब वह मेरा मुँह नहीं देखना चाहते, इसलिए अब मैं जाता हूँ। उन्हें फिर मुँह न दिखाऊँगा! मुझसे जो कुछ अपराध हुआ, उसे क्षमा करना।

यह कहते-कहते लालबिहारी का गला भर आया।

४

जिस समय लालबिहारी सिंह सिर झुकाये आनंदी के द्वार पर खड़ा था, उसी समय श्रीकंठ सिंह भी आँखें लाल किये बाहर से आये। भाई को खड़ा देखा, तो घृणा से आँखें फेर ली और कतरा कर निकल गये। मानो उसकी परछाहीं से दूर भागते हों।

आनंदी ने लालबिहारी की शिकायत तो की थी; लेकिन अब मन में पछता रही थी। वह स्वभाव से ही दयावती थी। उसे इसका तनिक भी ध्यान नहीं था कि बात इतनी बढ़ जायेगी। वह मन में अपने पति पर झुँझला रही थी कि यह इतने गरम क्यों होते हैं। उस पर यह भय भी लगा हुआ था कि कहीं मुझसे इलाहाबाद चलने को कहें, तो कैसे क्या करूँगी। इस बीच में जब उसने लालबिहारी को दरवाजे पर खड़े यह कहते सुना कि अब मैं जाता हूँ, मुझसे जो कुछ अपराध हुआ, क्षमा करना, तो उसका रहा-सहा क्रोध भी पानी हो गया। वह रोने लगी। मन का मैल धोने के लिए नयन-जल से उपयुक्त और कोई वस्तु नहीं है।

श्रीकंठ को देख कर आनंदी ने कहा – लाला बाहर खड़े बहुत रो रहे हैं।

श्रीकंठ – तो मैं क्या करूँ?

आनंदी – भीतर बुला लो। मेरी जीभ में आग लगे! मैंने कहाँ से यह झगड़ा उठाया।

श्रीकंठ – मैं न बुलाऊँगा।

आनंदी – पछताओगे। उन्हें बहुत ग्लानि हो गयी है, ऐसा न हो, कहीं चल दें।

श्रीकंठ न उठे। इतने में लालबिहारी ने फिर कहा – भाभी, भैया से मेरा प्रणाम कह दो। वह मेरा मुँह नहीं देखना चाहते; इसलिए मैं भी अपना मुँह उन्हें न दिखाऊँगा।

लालबिहारी इतना कह कर लौट पड़ा और शीघ्रता से दरवाजे की ओर बढ़ा। अंत में आनंदी कमरे से निकली और उसका हाथ पकड़ लिया। लालबिहारी ने पीछे फिर के देखा और आँखों में आँसू भरे बोला – मुझे जाने दो।

आनंदी – कहाँ जाते हो?

लालबिहारी – जहाँ कोई मेरा मुँह न देखे।

आनंदी – मैं न जाने दूँगी?

लालबिहारी – मैं तुम लोगों के साथ रहने योग्य नहीं हूँ।

आनंदी – तुम्हें मेरी सौगंध, अब एक पग भी आगे न बढ़ाना।

लालबिहारी – जब तक मुझे यह न मालूम हो जाय कि भैया का मन मेरी तरफ से साफ हो गया, तब तक मैं इस घर में कदापि न रहूँगा।

आनंदी –मैं ईश्वर को साक्षी देकर कहती हूँ कि तुम्हारी ओर से मेरे मन में तनिक भी मैल नहीं है।

अब श्रीकंठ का हृदय भी पिघला। उन्होंने बाहर आकर लालबिहारी को गले से लगा लिया। दोनों भाई खूब फूट-फूट कर रोये। लालबिहारी ने सिसकते हुए कहा – भैया, अब कभी मत कहना कि तुम्हारा मुँह न देखूँगा। इसके सिवा आप जो दंड देंगे, मैं सहर्ष स्वीकार करूँगा।

श्रीकंठ ने काँपते हुए स्वर से कहा – लल्लू! इन बातों को बिलकुल भूल जाओ। ईश्वर चाहेगा, तो फिर ऐसा अवसर न आवेगा।

बेनीमाधव सिंह बाहर से आ रहे थे। दोनों भाइयों को गले मिलते देख कर आनंद से पुलकित हो गये। बोल उठे – बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं। बिगड़ता हुआ काम बना लेती हैं।

गाँव में जिसने यह वृत्तांत सुना, उसी ने इन शब्दों में आनंदी की उदारता को सराहा – 'बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं।'

कठिन शब्दार्थ :

नंबरदार = गाँव का भू-स्वामी; मरम्मत = ठीक करना; निर्बल = बलहीन, कमजोर; वैद्यक ग्रंथ = चिकित्सा सम्बन्धी पुस्तक; निर्वाह = निभानेवाला; बहरी = बाज जैसा एक शिकारी पक्षी; शिकरे = बाज से छोटा एक शिकारी पक्षी; रीझ = प्रसन्न होना; टीमटाम = श्रृंगार, सजावट; किफायत = बचत करना; तिनक = चिढ़ना, गुस्सा होना; ढ़िठाई = दुस्साहस; उजड्ड = गँवार, असभ्य; खड़ाऊँ = काठ की बनी खूंटीदार पादुका; सुधि = ध्यान रहना; शऊर = तरीका, ढ़ंग; दब्बू = दबकर रहनेवाला; हथकंडा = षड्यंत्र; घुड़का = डाँटना; मुगदर = व्यायाम के लिए लकड़ी की बनी मुँगरी।

मुहावरे :

खून का घूँट पीकर रह जाना = क्रोध को दबाकर बैठ जाना;
पिंड छुडाना = पीछा छुड़ाना; आँखें लाल होना = गुस्सा करना;
तिलमिला उठना = बौखला जाना; उल्लू बनाना = मूर्ख बनाना;
गले लगाना = आलिंगन करना; सिर झुकाना = लज्जा से झुक जाना।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) ठाकुर साहब के कितने बेटे थे?
२) बेनीमाधव सिंह अपनी आधी से अधिक संपत्ति किसे भेंट के रूप में दे चुके थे?
३) ठाकुर साहब के बड़े बेटे का नाम क्या था?
४) श्रीकंठ कब घर आया करते थे?
५) आनंदी के पिता का नाम लिखिए।
६) थाली उठाकर किसने पलट दी?
७) गौरीपुर गाँव के जमीनदार कौन थे?
८) किसकी आँखें लाल हो गयी थीं?

९) बिगड़ता हुआ काम कौन बना लेती हैं?
१०) 'बड़े घर की बेटी' कहानी के लेखक कौन हैं?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) बेनीमाधव सिंह के परिवार का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
२) आनंदी ने अपने ससुराल में क्या रंग-ढंग देखा?
३) लालबिहारी आनंदी पर क्यों बिगड़ पड़ा?
४) आनंदी बिगड़ता हुआ काम कैसे बना लेती है?
५) आनंदी का चरित्र-चित्रण कीजिए।

III) निम्नलिखित वाक्य किसने किससे कहे ?

१) जल्दी से पका दो, मुझे भूख लगी है।
२) जिसके गुमान पर भूली हुई हो, उसे भी देखूँगा और तुम्हें भी।
३) बुद्धिमान लोग मूर्खों की बात पर ध्यान नहीं देते।
४) लालबिहारी को मैं अब अपना भाई नहीं समझता।
५) अब मेरा मुँह नहीं देखना चाहते, इसलिए अब मैं जाता हूँ।
६) भैया, अब कभी मत कहना कि तुम्हारा मुँह न देखूँगा।
७) मुझसे जो कुछ अपराध हुआ, क्षमा करना।

IV) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) अभी परसों घी आया है। इतना जल्दी उठ गया?
२) स्त्री गालियाँ सह लेती हैं, मार भी सह लेती हैं, पर मैके की निंदा उनसे नहीं सही जाती।
३) पर तुमने आजकल घर में यह क्या उपद्रव मचा रखा है?
४) उससे जो कुछ भूल हुई, उसे तुम बड़े होकर क्षमा करो।
५) बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं। बिगड़ता हुआ काम बना लेती हैं।

V) वाक्य शुद्ध कीजिए :

१) उनकी पितामह किसी समय बड़े धन-धान्य सम्पन्न थे।
२) स्वयं उनका पत्नी को ही इस विषय में उनसे विरोध थी।

३) आनंदी अपने नये घर में आया।
४) मुझे जाना दो।

VI) कोष्ठक में दिए गए उचित शब्दों से रिक्त स्थान भरिए :
(शनिवार, संतान, ऐसी, गौरीपुर, हाथी)
१) इस दरवाज़े पर ..... झूमता था।
२) ..... में रामलीला के वही जन्मदाता थे।
३) सुन्दर ..... को कदाचित् उसके माता-पिता भी अधिक चाहते थे।
४) श्रीकंठ सिंह ..... को घर आया करते थे।
५) बड़े घर की बेटियाँ ..... ही होती हैं।

VII) अन्य लिंग रूप लिखिए :
ठाकुर, पति, बेटा, स्त्री, बुद्धिमान, हाथी, भाई।

VIII) अन्य वचन रूप लिखिए :
घर, बेटी, भैंस, स्त्री, आँखें, थाली।

* * * * * *

2. `dmAm¡g

– ñdm_r oddH$mZX

c l H$ [naM` :

`J[éf ñdm_r oddH$mZX Or H$m OÝ_ 12 OZdar 1863 H$m H$cH$Îmm (H$mcH$Îmm) _ hAm Wm$& ZaÝÐZmW (ñdm_r oddH$mZX H$ ]M[Z H$m Zm_) H$ o[Vm odídZmW XÎmm Ama _mVm ^dZídar Xdr Wr$& ]M[Z g hr Am[ ]hV hr àoV^memcr, Jar]m H$ àoV X`m[U öX` a l Zdmc Ama ^o°$ Ed dXmÝV _éoM a l Zdmc W$& l r am_H$îU [a_hg Am[H$ Jé W$& ñdm_r oddH$mZX AÀN> d°$m W Ed g^r Y_m H$ AÜ`Vm ^r W$&

ogVå]a 1893 _ A_naH$m H$ oMH$mJm eha _ Am`moOV "gd-Y_ gå_cZ' _ohÝX Y_, ^o°$ Ama dXmÝV H$ ]ma _ñdm_rOr Z Om ^mfU oX`m, dh AoÛVr` Wm$& Am[ ^maV Xe, ^maV H$s àOm Ama ^maVr` gñH$oV H$ AÀN> kmVm W$& Bg H$maU l ÊS>- l ÊS>mVa _ ohÝX Y_ H$m AmÞË`, ^o°$ Ed dXmÝV H$ àMma-àgma _ Am[ oZaVa H$m` H$aV ah$& Am[H$s _Ë` 4 OcmB 1902 H$m hB$& "H$_`mJ', "^JdmZ H$îU Ama ^JdXJrVm', "_aUmÎma OrdZ', "_a JéXd' AmoX Am[H$s àogÕ aMZmE h$&

àñVV gå]mYZ, "`dmAm g' _ ñdm_r oddH$mZX Or Z Zd`dH$m H$n _mJXeZ oH$`m h$& Am[H$m odídmg Wm oH$ Xe H$m CÕma H$dc Zd`dH$ Ed Zd`doV`m H$ Ûnam hr g^d h$& ñdm_r oddH$mZX Or Z h__mZd oZ_mUH$mar Y_ Ed XeZ H$s oe j m Xr h Om h_ma amï> oZ_mU H$ ocE CZH$s AZ[_XZ h$&

ñdm_rOr H$s 150 dr O`Vr H$ C[cú`_CZH$s odMmaYmam H$m [naM` odÚmoW`m H$m oXcmZ hV Bg AZoXV [mR> H$m M`Z oH$`m J`m h$&

मेरी आशा, मेरा विश्वास नवीन पीढ़ी के नवयुवकों पर है। उन्हीं में से मैं अपने कार्यकर्ताओं का संग्रह करूँगा। वे सिंहविक्रम से देश की यथार्थ उन्नति संबंधी सारी समस्या का समाधान करेंगे। वर्तमान काल में अनुष्ठेय आदर्श को मैंने एक निर्दिष्ट रूप में व्यक्त कर दिया है और उसको कार्यान्वित करने के लिए मैंने अपना जीवन समर्पित कर दिया है।... वे एक केंद्र से दूसरे केंद्र का विस्तार करेंगे – और इस प्रकार हम धीरे-धीरे समग्र भारत में फैल जायेंगे।

भारतवर्ष का पुनरुत्थान होगा, पर वह शारीरिक शक्ति से नहीं, वरन् आत्मा की शक्ति द्वारा। वह उत्थान विनाश की ध्वजा लेकर नहीं, वरन् शांति और प्रेम की ध्वजा से... मैं अपने सामने यह एक सजीव दृश्य अवश्य देख रहा हूँ कि हमारी यह वृद्ध माता पुनः एक बार जाग्रत होकर अपने सिंहासन पर नवयौवनपूर्ण और पूर्व की अपेक्षा अधिक महा-महिमान्वित होकर विराजी है। शांति और आशीर्वाद के वचनों के साथ सारे संसार में उसके नाम की घोषणा कर दो।

देखो, वह निद्रित भारत अब जागने लगा है। मानो हिमालय के प्राणप्रद वायु-स्पर्श से मृत देह के शिथिलप्राय अस्थि-माँस तक में प्राण-संचार हो रहा है। जड़ता धीरे-धीरे दूर हो रही है। जो अंधे हैं, वे ही देख नहीं सकते और जो विकृत-बुद्धि हैं वे ही समझ नहीं सकते कि हमारी मातृ-भूमि अपनी गंभीर निद्रा से अब जाग रही है। अब कोई उसे रोक नहीं सकता। अब यह फिर सो भी नहीं सकती। कोई बाह्य शक्ति इस समय इसे दबा नहीं सकती क्योंकि यह असाधारण शक्ति का देश अब जागकर खड़ा हो रहा है।

एक नवीन भारत निकल पड़े – निकले हल पकड़कर, किसानों की कुटी भेदकर, मछुआ, मोची, मेहतरों की झोंपड़ियों से। निकल पड़े बनियों की दुकानों से, भुजवा के भाड़ के पास से, कारखाने से, हाट से, बाजार से; निकले झाड़ियों, जंगलों, पहाड़ों, पर्वतों से।

क्या भारत मर जाएगा? तब तो संसार से सारी आध्यात्मिकता का समूल नाश हो जाएगा, सारे सदाचारपूर्ण आदर्श जीवन का विनाश हो जाएगा, धर्मों के प्रति सारी मधुर सहानुभूति नष्ट हो जाएगी, सारी भावुकता का भी लोप हो जाएगा, और उसके स्थान में कामरूपी देव और विलासितारूपी देवी राज्य करेगी। धन उनका पुरोहित होगा। प्रतारणा,

पाशविक बल और प्रतिद्वंद्विता, ये ही उनकी पूजा-पद्धति होगी और मानवता उनकी बलिसामग्री हो जाएगी। ऐसी दुर्घटना कभी हो नहीं सकती।

भारत के राष्ट्रीय आदर्श हैं : त्याग और सेवा। आप इन धाराओं में तीव्रता उत्पन्न कीजिए और शेष सब अपने-आप ठीक हो जाएगा। तुम काम में लग जाओ; फिर देखोगे इतनी शक्ति आएगी कि तुम उसे सँभाल न सकोगे। दूसरों के लिए रत्ती-भर सोचने, काम करने से भीतर की शक्ति जाग उठती है। दूसरों के लिए रत्ती-भर सोचने से धीरे-धीरे हृदय में सिंह का-सा बल आ जाता है। तुम लोगों से मैं इतना स्नेह करता हूँ, परंतु यदि तुम लोग दूसरों के लिए परिश्रम करते-करते मर भी जाओ तो भी यह देखकर मुझे प्रसन्नता ही होगी।

केवल वही व्यक्ति सबकी अपेक्षा उत्तम रूप से कार्य करता है, जो पूर्णतया नि:स्वार्थी है, जिसे न तो धन की लालसा है, न कीर्ति की और न किसी अन्य वस्तु की ही। और मनुष्य जब ऐसा करने में समर्थ हो जाएगा तो वह भी एक बुद्ध बन जाएगा, और उसके भीतर से ऐसी शक्ति प्रकट होगी, जो संसार की अवस्था को संपूर्ण रूप से परिवर्तित कर सकती है।

जब तक करोड़ों भूखे और अशिक्षित रहेंगे, तब तक मैं प्रत्येक उस आदमी को विश्वासघातक समझूँगा, जो उनके खर्च पर शिक्षित हुआ है, परंतु जो उन पर तनिक भी ध्यान नहीं देता। वे लोग जिन्होंने गरीबों को कुचलकर धन पैदा किया है और अब ठाट-बाट से अकड़कर चलते हैं यदि उन बीस करोड़ देशवासियों के लिए जो इस समय भूखे और असभ्य बने हुए हैं, कुछ नहीं करते, तो वे घृणा के पात्र हैं।

हमेशा बढ़ते चलो! मरते दम तक गरीबों और पददलितों के लिए सहानुभूति – यही हमारा आदर्श वाक्य है। वीर युवकों! बढ़े चलो। ईश्वर के प्रति आस्था रखो। किसी चालबाजी की आवश्यकता नहीं, उससे कुछ नहीं होता। दुखियों का दर्द समझो और ईश्वर से सहायता की प्रार्थना करो – वह अवश्य मिलेगी।... युवकों! मैं गरीबों, मूर्खों और उत्पीड़ितों के लिए इस सहानुभूति और प्राणपण प्रयत्न को थाती के तौर पर तुम्हें अर्पण करता हूँ।... प्रतिज्ञा करो कि अपना सारा जीवन इन तीस करोड़ लोगों के उद्धार-कार्य में लगा दोगे, जो दिनोंदिन अवनति के गर्त में गिरते जा रहे हैं। यदि तुम सचमुच मेरी संतान हो, तो तुम किसी वस्तु से

न डरोगे, न किसी बात पर रुकोगे। तुम सिंहतुल्य होगे। हमें भारत को और पूरे संसार को जगाना है।

तुम तो ईश्वर की संतान हो, अमर आनंद के भागी हो, पवित्र और पूर्ण आत्मा हो। अतएव तुम कैसे अपने को जबर्दस्ती दुर्बल कहते हो? उठो, साहसी बनो, वीर्यवान होओ। सब उत्तरदायित्व अपने कंधे पर लो – यह याद रखो कि तुम स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हो। तुम जो कुछ बल या सहायता चाहो, सब तुम्हारे ही भीतर विद्यमान है।

एक बात पर विचार करके देखिए, मनुष्य नियमों को बनाता है या नियम मनुष्य को बनाते हैं? मनुष्य रुपया पैदा करता है या रुपया मनुष्यों को पैदा करता है? मनुष्य कीर्ति और नाम पैदा करता है या कीर्ति और नाम मनुष्य पैदा करते हैं? मेरे मित्रों, पहले मनुष्य बनिए, तब आप देखेंगे कि वे सब बाकी चीजें स्वयं आपका अनुसरण करेंगी। परस्पर घृणित द्वेषभाव को छोड़िए... और सदुद्देश्य, सदुपाय, सत्साहस एवं सद्धीय का अवलंबन कीजिए। आपने मनुष्य योनि में जन्म लिया है तो अपनी कीर्ति यहीं छोड़ जाइए।

जाति तो व्यक्तियों की केवल समष्टि है। शिक्षा के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को उपयुक्त बनाने के सिवाय मेरी और कोई उच्चाकांक्षा नहीं है। अपनी चिंता हमें स्वयं ही करनी है। इतना तो हम कर ही सकते हैं।... क्योंकि दुनिया तभी पवित्र और अच्छी हो सकती है, जब हम स्वयं पवित्र और अच्छे हों। वह है कार्य और हम हैं उसके कारण। इसलिए आओ, हम अपने-आपको पवित्र बना लें। आओ, हम अपने-आपको पूर्ण बना लें।

केवल मनुष्यों की आवश्यकता है; और सब कुछ हो जाएगा, किंतु आवश्यकता है वीर्यवान, तेजस्वी, श्रद्धासंपन्न और अंत तक कपट रहित नवयुवकों की। इस प्रकार के सौ नवयुवकों से संसार के सभी भाव बदल दिए जा सकते हैं। और सब चीजों की अपेक्षा इच्छाशक्ति का अधिक प्रभाव है। इच्छाशक्ति के सामने और सब शक्तियाँ दब जाएँगी, क्योंकि इच्छाशक्ति साक्षात् ईश्वर से निकलकर आती है। विशुद्ध और दृढ़ इच्छाशक्ति सर्वशक्तिमान है।

मैंने तो इन नवयुवकों का संगठन करने के लिए जन्म लिया है। यही क्या, प्रत्येक नगर में सैकड़ों और मेरे साथ सम्मिलित होने को तैयार

हैं; और मैं चाहता हूँ कि इन्हें अप्रतिहत गतिशील तरंगों की भाँति भारत में सब ओर भेजूँ, जो दीन-हीनों एवं पददलितों के द्वारा परसुख, नैतिकता, धर्म एवं शिक्षा उँड़ेल दें। और इसे मैं करूँगा, या मरूँगा।

मैं सुधार में विश्वास नहीं करता, मैं विश्वास करता हूँ स्वाभाविक उन्नति में। मैं अपने को ईश्वर के स्थान पर प्रतिष्ठित कर अपने समाज के लोगों के सिर पर यह उपदेश ''तुम्हें इस भाँति चलना होगा, दूसरे प्रकार नहीं'' – मढ़ने का साहस नहीं कर सकता। मैं तो सिर्फ उस गिलहरी की भाँति होना चाहता हूँ जो श्री रामचंद्रजी के पुल बनाने के समय थोड़ा बालू देकर अपना भाग पूरा कर संतुष्ट हो गई थी। यही मेरा भी भाव है।

लोग स्वदेश-भक्ति की चर्चा करते हैं। मैं स्वदेश-भक्ति में विश्वास करता हूँ, पर स्वदेश-भक्ति के संबंध में मेरा एक आदर्श है। बड़े काम करने के लिए तीन चीजों की आवश्यकता होती है। बुद्धि और विचार-शक्ति हम लोगों की थोड़ी सहायता कर सकती है। वह हमको थोड़ी दूर अग्रसर करा देती है और वहीं ठहर जाती है। किंतु हृदय के द्वारा ही महाशक्ति की प्रेरणा होती है, प्रेम असंभव को संभव कर देता है। जगत् के सब रहस्यों का द्वार प्रेम ही है। अत: मेरे भावी संस्कारकों, मेरे भावी देशभक्तों, तुम हृदयवान बनो। क्या तुम हृदय से समझते हो कि देव और ऋषियों की करोड़ों संतानें पशुतुल्य हो गई हैं? क्या हृदय में अनुभव करते हो कि करोड़ों आदमी आज भूखे मर रहे हैं। और वे कई शताब्दियों से इस भाँति भूखों मरते आ रहे हैं? क्या तुम समझते हो कि अज्ञात के काले बादल ने सारे भारत को आच्छन्न कर लिया है? क्या तुम यह सब समझकर कभी अस्थिर हुए हो? क्या तुम कभी इससे अनिद्रित हुए हो? क्या कभी यह भावना तुम्हारे रक्त में मिलकर तुम्हारी धमनियों में बही है? क्या वह तुम्हारे हृदय के स्पंदन से कभी मिली है? क्या उसने कभी तुम्हें पागल बनाया है? क्या कभी तुम्हें निर्धनता और नाश का ध्यान आया है? क्या तुम अपने नाम, यश, संपत्ति यहाँ तक कि अपने शरीर को भी भूल गए हो? क्या तुम ऐसे हो गये हो? यदि हो, तो जानो कि तुमने स्वदेश-भक्ति की प्रथम सीढ़ी पर पैर रखा है। जैसा तुममें से अधिक लोग जानते हैं, मैं धार्मिक महासभा के लिए अमेरिका नहीं गया था, किंतु देश के जनसाधारण की दुर्दशा के प्रतिकार करने का भूत मुझमें – मेरी आत्मा में घुस गया था। मैं अनेक वर्ष तक समग्र भारत में घूमता रहा, पर अपने

स्वदेशवासियों के लिए कार्य करने का मुझे कोई अवसर नहीं मिला, इसीलिए मैं अमेरिका गया। तुममें से अधिकांश जो मुझे उस समय जानते थे, इस बात को अवश्य जानते हैं। इस धार्मिक महासभा की कौन परवाह करता था? यहाँ मेरे रक्त-मांस- स्वरूप जनसाधारण की दशा हीन होती जाती थी, उनकी कौन खबर ले? स्वदेश-हितैषी होने की यह मेरी पहली सीढ़ी है।

उठो, जागो, स्वयं जगकर औरों को जगाओ। अपने नर-जन्म को सफल करो। ''उत्तष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत – उठो, जागो और तब तक रुको नहीं, जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाय।''

जो अपने आपमें विश्वास नहीं करता, वह नास्तिक है। प्राचीन धर्मों ने कहा है, वह नास्तिक है जो ईश्वर में विश्वास नहीं करता। नया धर्म कहता है, वह नास्तिक है जो अपने आपमें विश्वास नहीं करता।

यह एक बड़ी सच्चाई है; शक्ति ही जीवन और कमजोरी ही मृत्यु है। शक्ति परम सुख, जीवन अजर-अमर है; कमजोरी कभी न हटने वाला बोझ और यंत्रणा है; कमजोरी ही मृत्यु है।

उपनिषदों में यदि कोई ऐसा शब्द है, जो वज्रवेग से अज्ञानराशि के ऊपर पतित होता है, उसे बिलकुल उड़ा देता है, तो वह है 'अभीः' निर्भयता। संसार को यदि किसी एक धर्म की शिक्षा देनी चाहिए, तो वह है 'निर्भीकता'। यह सत्य है कि इस ऐहिक जगत् में, अथवा आध्यात्मिक जगत् में भय ही पतन तथा पाप का कारण है। भय से ही दुख होता है, यह मृत्यु का कारण है तथा इसी के कारण सारी बुराई तथा पाप होता है।

सबसे पहले हमारे तरुणों को मजबूत बनना चाहिए। धर्म इसके बाद की वस्तु है। मेरे तरुण मित्रों! शक्तिशाली बनो, मेरी तुम्हें यही सलाह है। तुम गीता के अध्ययन की अपेक्षा फुटबाल के द्वारा ही स्वर्ग के अधिक समीप पहुँच सकोगे। ये कुछ कड़े शब्द हैं, पर मैं उन्हें कहना चाहता हूँ, क्योंकि तुम्हें प्यार करता हूँ कि काँटा कहाँ चुभता है। मुझे इसका कुछ अनुभव है। तुम्हारे स्नायु और मांसपेशियाँ अधिक मजबूत होने पर तुम गीता अधिक अच्छी तरह समझ सकोगे। तुम अपने शरीर में शक्तिशाली रक्त प्रवाहित होने पर, श्रीकृष्ण के तेजस्वी गुणों और उनकी अपार शक्ति को अधिक समझ सकोगे। जब तुम्हारा शरीर मजबूती से तुम्हारे पैरों पर खड़ा रहेगा और तुम अपने को 'मनुष्य' अनुभव करोगे,

तब तुम उपनिषद और आत्मा की महानता को अधिक अच्छा समझ सकोगे।

हम देख सकते हैं कि एक तथा दूसरे मनुष्य के बीच अंतर होने का कारण उसका अपने आपमें विश्वास होना और न होना ही है। अपने आपमें विश्वास होने से सबकुछ हो सकता है। मैंने अपने जीवन में इसका अनुभव किया है, अब भी कर रहा हूँ और जैसे-जैसे मैं बड़ा होता जा रहा हूँ, मेरा विश्वास और भी दृढ़ होता जा रहा है।

प्रत्येक आत्मा ही अव्यक्त ब्रह्म है। बाह्य एवं अंत:प्रकृति, दोनों का नियतन कर, इस अंतर्निहित ब्रह्म-स्वरूप को अभिव्यक्त करना ही जीवन का ध्येय है। कर्म, भक्ति, योग या ज्ञान के द्वारा; इनमें से किसी एक के द्वारा या एक से अधिक के द्वारा, या सबके सम्मिलन के द्वारा यह ध्येय प्राप्त कर लो और मुक्त हो जाओ। यही धर्म का सर्वस्व है। मतमतांतर, विधि या अनुष्ठान, ग्रंथ, मंदिर – ये सब गौण हैं। यदि ईश्वर है, तो हमें उसे देखना चाहिए; यदि आत्मा है तो हमें उसकी प्रत्यक्ष अनुभूति कर लेनी चाहिए; अन्यथा उन पर विश्वास न करना ही अच्छा है। ढोंगी बनने की अपेक्षा स्पष्ट रूप से नास्तिक बनना अच्छा है।

एक विचार ले लो। उसी एक विचार के अनुसार अपने जीवन को बनाओ; उसी को सोचो, उसी का स्वप्न देखो और उसी पर अवलंबित रहो। अपने मस्तिष्क, मांसपेशियों, स्नायुओं और शरीर के प्रत्येक भाग को उसी विचार से ओत-प्रोत होने दो और दूसरे सब विचारों को अपने से दूर रखो। यही सफलता का रास्ता है और यही वह मार्ग है जिसने महान् धार्मिक पुरुषों का निर्माण किया है।

मैं अभी तक के सभी धर्मों को स्वीकार करता हूँ और उन सबकी पूजा करता हूँ; मैं उनमें से प्रत्येक के साथ ईश्वर की उपासना करता हूँ; वे स्वयं चाहे किसी भी रूप में उपासना करते हों। मैं मुसलमानों की मस्जिद में जाऊँगा, मैं ईसाइयों के गिरिजा में क्रास के सामने घुटने टेककर प्रार्थना करूँगा, मैं बौद्ध-मंदिरों में जाकर बुद्ध और उनकी शिक्षा की शरण लूँगा। मैं जंगल में जाकर हिंदुओं के साथ ध्यान करूँगा, जो हृदयस्थ ज्योतिस्वरूप परमात्मा को प्रत्यक्ष करने में लगे हुए हैं।

शिक्षा विविध जानकारियों का ढेर नहीं है, जो तुम्हारे मस्तिष्क में ठूँस दिया गया है और जो आत्मसात् हुए बिना वहाँ आजन्म पड़ा रहकर

गड़बड़ मचाया करता है। हमें उन विचारों की अनुभूति कर लेने की आवश्यकता है, जो जीवन-निर्माण, मनुष्य-निर्माण तथा चरित्र-निर्माण में सहायक हों। यदि आप केवल पाँच ही परखे हुए विचार आत्मसात् कर उनके अनुसार अपने जीवन और चरित्र का निर्माण कर लेते हैं, तो आप पूरे ग्रंथालय को कंठस्थ करने वाले की अपेक्षा अधिक शिक्षित हैं।

अपने भाइयों का नेतृत्व करने का नहीं, वरन् उनकी सेवा करने का प्रयत्न करो। नेता बनने की इस क्रूर उन्मत्तता ने बड़े-बड़े जहाजों को इस जीवन रूपी समुद्र में डुबो दिया है।

हमारे स्वभाव में संगठन का सर्वथा अभाव है, पर इसे हमें अपने स्वभाव में लाना है। इसका महान् रहस्य है ईर्ष्या का अभाव। अपने भाइयों के मत से सहमत होने को सदैव तैयार रहो और हमेशा समझौता करने का प्रयास करो। यही है संगठन का पूरा रहस्य।

मैं तुम सबसे यही चाहता हूँ कि तुम आत्मप्रतिष्ठा, दलबंदी और ईर्ष्या को सदा के लिए छोड़ दो। तुम्हें पृथ्वी माता की तरह सहनशील होना चाहिए। यदि तुम ये गुण प्राप्त कर सको, तो संसार तुम्हारे पैरों पर लोटेगा।

कठिन शब्दार्थ :

सिंह विक्रम = सिंहबल; अनुष्ठेय = आचरणीय; पुनरुत्थान = पुनः उन्नति; प्रतारणा = धूर्तता; पाशविक = मृगीय; उत्पीड़ित = सताए हुए; थाती = धरोहर, अमानत; गर्त = गड्ढ़ा; नियतन = निर्धारित करना, आवंटन करना; वीर्यवान = साहसी, तेजोवान; गिरिजा = चर्च; उन्मत्तता = पागलपन; अवनति = विनाश।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) स्वामी विवेकानंद का विश्वास किन पर है?

२) स्वामी विवेकानंद के अनुसार भारत के राष्ट्रीय आदर्श क्या हैं?

३) कौन सबकी अपेक्षा उत्तम रूप से कार्य करता है?

४) किस शक्ति के सामने सब शक्तियाँ दब जाएँगी?

५) असंभव को संभव बनानेवाली चीज़ क्या है?

६) जो अपने आपमें विश्वास नहीं करता, वह क्या है?
७) कमज़ोरी किसके समान है?
८) सबसे पहले हमारे तरुणों को क्या बनना चाहिए?
९) प्रत्येक आत्मा क्या है?
१०) नवयुवकों को किसकी तरह सहनशील होना चाहिए?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) भारतवर्ष का पुनरुत्थान कैसे होगा?
२) त्याग और सेवा के बारे में स्वामी विवेकानंद जी के क्या विचार हैं?
३) स्वदेश-भक्ति के बारे में स्वामी विवेकानंद जी का आदर्श क्या है?
४) सर्व धर्म सहिष्णुता के बारे में स्वामी विवेकानंद जी के विचार लिखिए।
५) शिक्षा के बारे में स्वामी विवेकानंद जी क्या कहते हैं?

III) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) 'यह याद रखो कि तुम स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हो।'
२) 'उठो, जागो और तब तक रुको नहीं, जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए।'
३) 'भय से ही दु:ख होता है, यह मृत्यु का कारण है तथा इसी के कारण सारी बुराई तथा पाप होता है।'
४) 'ढोंगी बनने की अपेक्षा स्पष्ट रूप से नास्तिक बनना अच्छा है।'
५) 'मैं तुम सबसे यही चाहता हूँ कि तुम आत्मप्रतिष्ठा, दलबंदी और ईर्ष्या को सदा के लिए छोड़ दो।'

IV) विलोम शब्द लिखिए :

आशा, साधारण, स्वदेश, स्वार्थी, कीर्ति, शिक्षित, पवित्र, जन्म, निर्धन, मज़बूत, धर्म, नास्तिक।

V) समानार्थक शब्द लिखिए :

नवीन, पुरोहित, जंगल, पहाड़, ईश्वर, साहस, तरुण, अधिक।

VI) निम्नलिखित अनुच्छेद पढ़कर उस पर आधारित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

हमेशा बढ़ते चलो। मरते दम तक गरीबों और पददलितों के लिए सहानुभूति – यही हमारा आदर्श वाक्य है। वीर युवकों! बढ़े चलो। ईश्वर के प्रति आस्था रखो। किसी चालबाज़ी की आवश्यकता नहीं, उससे कुछ नहीं होता। दुखियों का दर्द समझो और ईश्वर से सहायता की प्रार्थना करो – वह अवश्य मिलेगी। युवकों! मैं गरीबों, मूर्खों और उत्पीडितों के लिए इस सहानुभूति और प्राणपण प्रयत्न को थाती के तौर पर तुम्हें अर्पण करता हूँ। प्रतिज्ञा करो कि अपना सारा जीवन इन तीस करोड़ लोगों के उद्धार-कार्य में लगा दोगे, जो दिनोंदिन अवनति के गर्त में गिरते जा रहे हैं। यदि तुम सचमुच मेरी संतान हो, तो तुम किसी वस्तु से न डरोगे, न किसी बात पर रुकोगे। तुम सिंहतुल्य होगे। हमें भारत को और पूरे संसार को जगाना है।

प्रश्न : १) हमारा आदर्श वाक्य क्या है?
२) किसके प्रति आस्था रखनी चाहिए?
३) किसकी आवश्यकता नहीं है?
४) तुम किसके समान होगे?
५) हमें किसे जगाना है?

VII) योग्यता विस्तार :

माता शारदादेवी एवं श्री रामकृष्ण परमहंस के संबंध में जानकारी प्राप्त कीजिए।

* * * * * *